# इकाई 11 बाणभट्ट की आत्मकथा : भारतीय जीवनदृष्टि

इकाई की रूपरेखा


11.0 उद्देश्य
11.1 प्रस्तावना
11.2 बाणभट्ट की आत्मकथा : जीवनदृष्टि
  11.2.1 प्रेम की परिकल्पना
  11.2.2 नारी चेतना की अभिव्यक्ति
  11.2.3 संस्कृति और समन्वयात्मकता
11.3 बाणभट्ट की आत्मकथा : संरचना और शैली
11.4 संवाद योजना
11.5 विशिष्ट प्रसंग निर्मिति
11.6 सारांश
11.7 प्रश्न


## 11.0 उद्देश्य

एम.एच.डी.-3 'उपन्यास एवं कहानी' पाठ्यक्रम की यह ग्यारहवीं और खंड-3 की यह पहली इकाई है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' एक ऐतिहासिक उपन्यास है। इसके माध्यम से जहाँ आप अतीत के एक विशिष्ट कालखण्ड की एक मनोरम झलक देखेंगे वहीं दूसरी ओर अपने वर्तमान जीवन के कुछ प्रेरणाप्रद सन्दर्भों को भी उजागर होते हुए पाएँगे। इस इकाई में आप:

- 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास की कलात्मकता से संबंधित विभिन्न बिंदुओं से परिचित हो सकेंगे,
- उपन्यास की कथा वस्तु की संरचना और अलंकृत शैली की विशिष्टता से परिचित हो सकेंगे,
- संवाद रचना में प्रयुक्त भाषा की सहजता, सरलता और पात्रों के मनो भावों को अभिव्यक्त करने की क्षमता से अवगत हो सकेंगे,
- विशिष्ट प्रसंग निर्मिति के महत्व और औचित्य को जान सकेंगे।

## 11.1 प्रस्तावना

हजारी प्रसाद द्विवेदी हिंदी-साहित्य जगत के एक विशिष्ट हस्ताक्षर है। साहित्येतिहासकार, आलोचक और निबंधकार उपन्यासकार के रूप में भी इन्होंने विशिष्ट उपलब्धि का परिचय दिया है। 'हिंदी साहित्य का अतीत', 'भारतीय धर्मसाधना', 'सूरदास', 'कबीर' आदि ग्रंथ उनके साहित्य की परख और इतिहास बोध की प्रखरता को रेखांकित करते हैं। 'अशोक के फूल', 'कल्पलता', 'कुटज' आदि निबंध-संग्रह, द्विवेदी जी को एक सर्वोत्तम ललित निबंधकार और भारतीय संस्कृति के उद्गाता के रूप में रेखांकित करते है। एक ऐतिहासिक उपन्यासकार के रूप में भी उनकी निपुणता रेखांकित हुई है।

'बाणभट्ट की आत्मकथा' के साथ ही -पुनर्नवा', 'चारुचन्द्रलेखा' और 'अनामदास का पोथा' जैसे ऐतिहासिक उपन्यास द्विवेदी जी की कलात्मक क्षमता के साथ ही उनके प्रखर इतिहास बोध को भी रेखांकित करते है। इन उपन्यासों की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता बोध के स्तर पर

Scanned by TapScanner

ऐतिहासिकता और पौराणिकता की रक्षा करते हुए अपने युग और समाज के सच को भी उजागर करता है। समसामयिक सामाजिक यथार्थ को संकेतित करने की प्रवृत्ति ही द्विवेदी के उपन्यासों को समकालीनता से जोड़ती है।

'बाणभट्ट की आत्मकथा' 1946 की रचना है। इसमें बाणभट्ट और महाराज हर्ष के एक छोटे कालखण्ड को आधार बनाया गया है। इस उपन्यास के केंद्र में स्वयं बाणभट्ट का जीवन है, जो राष्ट्रीय अस्मिता की प्रतीक तुवरमिलिंद की कन्या भट्टिनी की मुक्ति के महत् उद्देश्य को लेकर आगे बढ़ता है। लेकिन यहाँ द्विवेदी जी की जो मुख्य विशेषता है, वह केवल भट्टिनी की मुक्ति तक ही सीमित न रहकर पराधीन भारत की राष्ट्रीय मुक्ति, नारी मुक्ति को भी रेखांकित करती है। इस प्रक्रिया में द्विवेदी जी ने ऐतिहासिकता की पूरी तरह रक्षा करते हुए अपने युग के राष्ट्रीय आंदोलन के लिए अनिवार्य राष्ट्रीय एकता, सामाजिक-साम्प्रदायिक सद्भाव, नारी-मुक्ति, जातिवाद की भावना को अत्यंत कलात्मक ढंग से संकेतित किया है। यह समूचा प्रयास उपन्यास को समकालीन यथार्थ से जोड़ता है। प्रस्तुत इकाई में हम इन तथ्यों का विवेचन-विश्लेषण करने का प्रयास करेंगे।

## 11.2 बाणभट्ट की आत्मकथा : जीवनदृष्टि

'बाणभट्ट की आत्मकथा' के सृजन के पीछे हजारीप्रसाद द्विवेदी का उद्देश्य अतीत-वैभव की भव्यता का चित्र प्रस्तुत करना नहीं था और न ही ऐतिहासिक घटनाओं एवं तिथियों को ब्योरेवार प्रस्तुत करना था। इस रचना का उद्देश्य था ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में तत्कालीन युगीन जीवन के आंतरिक यथार्थ को उद्घाटित करना। इसलिए ऐतिहासिक तथ्य और सांस्कृतिक तत्वों का आधार लेकर तत्कालीन युग-सत्य की खोज की गयी है। द्विवेदी जी ने एक युग-विशेष की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं को छानबीन कर समकालीन संदर्भों में उनकी संगति बिठायी है। इस उपन्यास के द्वारा [मानवीय मूल्यों की चिंता, मानवता की स्थापना, नारी-स्वतंत्रता, जातिविहीन समाज की स्थापना] के द्वारा स्वाधीन भारत की कल्पना को साकार करने का प्रयास किया गया है। अतः यह उपन्यास [जितना ऐतिहासिक है उतना समसामयिक भी] यह लेखक की गहरी सूझ-बूझ, यथार्थवादी दृष्टिकोण और सर्जनात्मक विशिष्टता का ही प्रमाण है कि अतीतकालीन समस्याएँ अपने समय के संदर्भ में जितनी सार्थक है, आज के संदर्भ में उतनी ही संगत भी। अपने समय की स्थितियों के प्रति सजगता और कलात्मक चेतना के कारण द्विवेदी जी समय के अंतर को सहजता से दूर करते है। ऐतिहासिक कथ्य को कल्पना का आधार देकर मानवीय संवेदनाओं, जटील संबंधों को, सच्चे प्रेम और चिंताओं को वास्तविक धरातल से जोड़ देते है। इससे उपन्यास में जितनी गहराई, व्यापकता है उतनी ही विश्वसनीयता भी शामिल है।

महाराज हर्षवर्धन के राज्यकाल में जो विदेशी आक्रमण हुए तथा उनके परिणामस्वरूप जनता को जो असहनीय कष्ट और अमानवीय यातनाएँ भोगनी पड़ी इसका चित्रण योग्य विम्बयोजना के माध्यम से किया गया है। इस भयावह स्थिति से देश को उबारने के लिए ही उपन्यासकार द्विवेदीजी ऐतिहासिक दृष्टि व्यापक, मानवीय धरातल से उठती है, वे ऐतिहासिक बोध की सार्थकता को मानवीय उपयोगिता में मानते है। सामाजिक विकास की प्रक्रिया में इतिहास की वैज्ञानिक दृष्टि को कैसे उपयोग में लाया जा सकता है यह पहली बार 'बाणभट्ट की आत्मकथा' के द्वारा स्पष्ट हो जाता है। इतिहास के विकास और पतन में जनसाधारण की भूमिका का महत्व जन संघर्ष और विकास की कहानी व्यक्ति के स्थान पर समूह का महत्व और जनसामान्य की सोच का क्या प्रभाव होता यह पहली बार द्विवेदीजी की इतिहास दृष्टि में परिलक्षित हुआ है।

Scanned by TapScanner

'बाणभट्ट की आत्मकथा' के विजन में केन्द्रीय स्थिति एक ऐसी प्रेम-संवेदना की है जो लौकोत्तर है। उपन्यास का नायक बाणभट्ट निपुणिका और भट्टिनी के प्रेम का आलम्बन है। यह प्रेम अपनी गहनता, तीव्रता, त्याग और संयम में अद्वितीय है। निपुणिका का बाणभट्ट के प्रति प्रेम उद्दाम होते हुए भी आत्मबलिदान में समाप्त होकर उसे उदात्त बना देता है। द्विवेदी जी प्रेम के उस भारतीय आदर्श के कायल हैं जो मानता है कि तपस्या और लोककल्याण की भावना से सम्पन्न होने पर ही प्रेम स्थाई और कल्याणकारी होता है। कालिदास ने अपने काव्य में इसी प्रेम का चित्रण किया है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में निपुणिका का बाणभट्ट के प्रति प्रेम कामजन्य था, इसी कारण वह कमल पत्र पर पड़ी जल की बूँद की तरह बिखर गया। पर जब यह प्रेम छह वर्षों के पश्चाताप और प्रायश्चित की आँच में तप कर कंचन बन गया तो इसमें स्थायित्व आ गया। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की एक पात्र, महामाया, एक स्थान पर बाणभट्ट से कहती है : "स्त्री प्रकृति है। उसकी सफलता पुरुष को बाँधने में है, किन्तु सार्थकता पुरुष की मुक्ति में है।"(पृ. 91-92) निपुणिका पर महामाया के इस कथन का अद्भुत प्रभाव पड़ा है। जब निपुणिका को विश्वास हो जाता है, और बाणभट्ट भी इसकी पुष्टि कर देता है, कि वह बाणभट्ट को बाँधने में सफल हुई है तब वह उसे मुक्त कर अपनी सार्थकता प्रमाणित करती है और वह भट्टिनी तथा उसके बीच से हट जाती है। अपनी मृत्यु की घड़ी में भी वह परम सन्तुष्ट है।

भट्टिनी और बाणभट्ट का प्रेम तो और भी उदात्त है। बाणभट्ट भट्टिनी को, जो एक अपहृत राजकुमारी है, हर्षवर्द्धन के एक सामन्त के अन्तःपुर से निकाल कर उसकी रक्षा करता है। इस साहसिक अभियान के पीछे काम की नहीं, बल्कि कर्तव्य की प्रेरणा है। बाणभट्ट नारी का बेहद सम्मान करता है, वह नारी देह को देवमन्दिर मानता है। निपुणिका के प्रेम की उपेक्षा भी उसने अपने इसी मूल्यबोध के कारण, अनजान में, कर दी थी। निपुणिका की प्रेरणा से ही वह अपनी जान की बाजी लगाकर, भट्टिनी की रक्षा करता है। बाणभट्ट और भट्टिनी, साथ में निपुणिका भी, काफी दिनों तक साथ साथ रहते हैं। इसी साहचर्य से भट्टिनी के मन में बाणभट्ट के प्रति अनुराग का उदय होता है। पर यह प्रेम वाणी के माध्यम से तो कभी व्यक्त नहीं ही होता, आंगिक चेष्टाओं और सात्विक भावों के रूप में भी बड़ी मुश्किल से व्यक्त होता दिखाई देता है। बाणभट्ट भट्टिनी की पूजा करता है; भट्टिनी के प्रति उसके मन में केवल श्रद्धा ही श्रद्धा है, समानता के स्तर पर प्रतिष्ठित होने वाला प्रेम नहीं। इस प्रेम में भावना का उफान कहीं नहीं दिखाई देता; शरीर प्राप्ति या काम का आकर्षण तो इसमें है ही नहीं। यह प्रेम केवल भावना के रूप में है जो अत्यन्त प्रगाढ़ तो है, पर काम का अतिक्रमण कर भक्ति के क्षेत्र में पहुँचा हुआ है। निपुणिका और भट्टिनी दोनों बाणभट्ट से प्रेम करती हैं, पर चूँकि यह प्रेम काम का अतिक्रमण कर चुका है, अतः वे एक दूसरे के प्रति ईर्ष्या या असूया भाव से ग्रस्त नहीं हैं। उपन्यास के अन्त में बाणभट्ट के प्रति भटिटनी का प्रेम अभिव्यक्त होता है, पर वह प्रेम मानव कल्याण के एक उदात्त लक्ष्य के प्रति समर्पित है, शारीरिक मिलन के प्रति नहीं।

बाणभट्ट की आत्मकथा में चित्रित प्रेम सामान्यतः उपन्यासों में चित्रित होने वाले प्रेम की तुलना में निश्चय ही विशिष्ट है। कुछ लोगों को यह प्रेम हवाई, अमनोवैज्ञानिक, आदर्शवादी, अयथार्थ आदि प्रतीत हो सकता है, पर इससे गुजरने का एक अपना सुख है। यह प्रेम उपन्यासकार के अपने विशिष्ट विजन की वस्तु है, जिसे विश्वसनीय रूप में प्रस्तुत करने में उसे अद्भुत सफलता मिली है। यह विजन आगे चलकर एक व्यापक सामाजिक यथार्थ की पृष्ठभूमि निर्मित करता है।

'बाणभट्ट की आत्मकथा' प्रेम की संवेदना तक सीमित नहीं है। इसके भीतर एक राष्ट्रीय संकट का इतिहास बोध भी सन्निहित है। किसी भी राष्ट्र के इतिहास में राजनीतिक संकट,

Scanned by TapScanner

जिसमें विदेशी शक्तियों का आक्रमण भी शामिल है, आते ही रहते हैं। जिस समय 'बाणभट्ट की आत्मकथा' लिखी जा रही थी, भारत परतन्त्र था और द्वितीय विश्वयुद्ध की विनाशलीला अपने चरम पर थी। उपन्यासकार की चेतना में यह परतन्त्रता राष्ट्रीय संकट के रूप में विद्यमान थी। इसकी अभिव्यक्ति बाणभट्ट की आत्मकथा में परोक्ष रूप में, हर्षवर्द्धन काल के राष्ट्रीय संकट के रूप में, हुई है। यद्यपि स्वयं हर्षवर्द्धन को हूणों के किसी आक्रमण का सामना नहीं करना पड़ा था, पर उसके राज्यकाल में पश्चिम से उनके आक्रमण की सम्भावना बनी हुई थी। बाणभट्ट की आत्मकथा में इस सम्भावना को औपन्यासिक प्रसंग के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस प्रसंग के रूप में द्विवेदी जी का इतिहास-बोध भी व्यक्त हुआ है। इतिहासकार इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि भारत में विदेशी आक्रमणकारियों की सफलता का प्रमुख कारण सामान्य जनता की राजनीतिक उदासीनता या तटस्थता, हिन्दू समाज व्यवस्था के विरोधाभास, समाज का अनेक जातियों में विभाजन तथा निरन्तर बढ़ता जातिभेद और वर्णभेद था। इस काल की जनता को इस बात का बोध नहीं था कि विदेशी आक्रमणकारियों से युद्ध में उसकी भी कोई भूमिका हो सकती है। इसका एक बड़ा कारण गुप्तकाल के बाद जातिगत भेदभाव और संकीर्णता में निरन्तर होती वृद्धि थी। युद्ध क्षत्रियों का पेशा तो बहुत पहले से ही माना जाता था, पर धीरे धीरे यह मान्यता कट्टर संकीर्णता में परिणत होती गयी और युद्ध करना केवल राजपूतों का काम माना जाने लगा। इसके अतिरिक्त गुप्त काल में सामन्ती प्रथा का जन्म हुआ, जिसके कारण सेना में भी वर्णभेद की स्थिति पैदा हो गयी। जब तक सम्राट् शक्तिशाली रहे तब तक तो इस व्यवस्था से लाभ ही होता रहा पर केन्द्रीय शक्ति के दुर्बल होते ही यह व्यवस्था सैन्य शक्ति की दुर्बलता बन गयी। बाणभट्ट की आत्मकथा में इस राजनीतिक स्थिति को मार्मिक और ऐतिहासिक यथार्थ के रूप में प्रस्तुत किया गया है। उपन्यास में कुमार कृष्णवर्द्धन, भर्तृवर्मा, लोरिकदेव आदि भारतवर्ष को हूणों के आक्रमण से बचाने के लिए किसी राजशक्ति की, विशेष कर पश्चिमोत्तर सीमान्त के प्रतापी शासक ध्रुवर भिटिन्द की, भूमिका को आवश्यक मानते हैं। पर विद्रोहिणी महामाया भैरवी इसका विरोध करती है। वह एक जनसभा को सम्बोधित करती हुई कहती है :

"आर्य, सभासदो, उत्तरापथ के लाख लाख नौजवानों ने क्या कंकण वलय धारण किया है? क्या वे वृद्धों और बालकों, बेटियों और बहुओं, देवमन्दिरों और विहारों की रक्षा के लिए अपने प्राण नहीं दे सकते? क्या इस देश के विद्वानों में स्वतन्त्र संगठन बुद्धि का विलोप हो गया है?" (पृ. 218) वस्तुतः यह महामाया भैरवी का नौजवानों और विद्वानों से प्रश्न नहीं है, बल्कि उपन्यासकार का अपने समकालीन नौजवानों और बुद्धिजीवियों को आह्वान है। महामाया युवकों को 'देवपुत्रों' और 'महाराजाधिराजों' की आज्ञा छोड़ने और संगठित होकर आक्रमणकारियों का सामना करने के लिए उद्बुद्ध करती है। वह घोषणा करती है :

"राजाओं, राजपुत्रों और देवपुत्रों की आज्ञा पर निश्चेष्ट बने रहने का निश्चित परिणाम पराभव है। प्रजा में मृत्यु का भय छा गया है, यह अशुभ लक्षण है। अगर तुम आर्यावर्त को बचाना चाहते हो तो प्राण देने के लिए तत्पर हो जाओ। धर्म के लिए प्राण देना किसी जाति का पेशा नहीं है, वह मनुष्य मात्र का उत्तम लक्ष्य है। अमृत के पुत्रो, मैं भविष्य देख रही हूँ। राजा, महाराजा और सामन्त स्वार्थ के गुलाम बनते जा रहे हैं। प्रजा भीरु और कायर होती जा रही है। विद्वान् और शीलवान नागरिकों की बुद्धि कुंठित होती जा रही है। धर्माचरण में इसलिए व्याघात उपस्थित हुआ है कि राजा अन्धा है, प्रजा अन्धी है और विद्वान् अन्धे हैं। अपने आप को बचाओ, धर्म पर दृढ़ रहो, न्याय के लिए मरना सीखो, ब्राह्मण से चाण्डाल तक एक हो जाओ--वज्रटान की तरह दुर्भेद्य एक। यही बचने का उपाय है।" (पृ. 220-21) वस्तुतः यह उद्बोधन उपन्यासकार का है जो ब्रिटिश शासन काल में भारतीय जीवन में व्याप्त मतभेद, जड़ता, कायरता और निर्णयहीनता से व्यथित था। तत्कालीन भारत की स्थिति से पीड़ित लेखक का सारा आक्रोश इस उद्बोधन द्वारा व्यक्त हुआ है। उपन्यास की महामाया

Scanned by TapScanner

यह पुलन समान मन पर अद्भुत प्रभाव छोड़ता है।

## 11.2.1 प्रेम की परिकल्पना

*बाणभट्ट की आत्मकथा* में भारतीय जीवनदृष्टि की अभिव्यक्ति प्रचुर मात्रा में और सफलतापूर्वक हुई है। इस जीवनदृष्टि के कई पक्ष उपन्यास में उभरे हैं। इनमें प्रमुख पक्ष प्रेम-दर्शन का है। प्रेम साहित्य मात्र का, स्वभावत: उपन्यास का भी, सर्वाधिक प्रिय विषय है। *बाणभट्ट की आत्मकथा* में बाणभट्ट दो प्रेमिकाओं के प्रेम का आलम्बन बनता है। वे हैं--निपुणिका और भट्टिनी; उज्जयिनी की नगरवधू मदनश्री भी उसके आकर्षण में बँधती है, पर यह आकर्षण क्षणिक है। इनमें बाणभट्ट और भट्टिनी, दोनो में से कोई भी काम-राग से अन्धा नहीं हैं। निपुणिका आरम्भ में बाणभट्ट के प्रति मोहग्रस्त है, पर उसका यह मोह भी छह वर्षों की तपस्या से कट जाता है और अन्त तक पहुँच कर तो वह, अपना सर्वस्व भट्टिनी और बाणभट्ट को देकर स्वयं प्रेम के मार्ग से हट जाती है।

इस प्रेम प्रसंग का किंचित् विस्तार अपेक्षित है। बाणभट्ट के चरित्र की दुर्लभ विशेषता यह है कि वह नारी का बहुत सम्मान करता है। वह स्त्री को भोग्या या काम की वस्तु नहीं, बल्कि देवमन्दिर मानता है। उसकी नाट्यमंडली की अभिनेत्रियाँ कुलवधुओं का सम्मान और गरिमा प्राप्त करती हैं। पर उसकी एक अभिनेत्री, निपुणिका, उससे प्रेम कर बैठती है और उससे प्रोत्साहन न पाकर, ग्लानिवश, उसकी नाट्यमंडली छोड़ कर भाग जाती है। पर जल्द ही निपुणिका को अपनी भूल का भान हो जाता है। फिर भी वह बाणभट्ट के पास लौट कर नहीं आती। छह वर्षों तक वह इधर उधर भटकती, मारी मारी फिरती है। उसे इस बात का किंचित् आभास है कि बाणभट्ट के मन में उसके प्रति अनुराग है, पर उस अनुराग में काम का भाव नहीं है। निपुणिका के चले जाने के बाद बाणभट्ट का उसकी खोज में भटकना और फिर अपनी नाट्यमंडली को ही तोड़ देना इसका परिचायक है। निपुणिका इस देवोपम चरित्र वाले व्यक्ति को अपने काम-राग में बाँधने की कुवासना से इतनी दु:खी है कि वह प्रायश्चित भाव से छह वर्षों तक भटकती रहती है। यह एक प्रकार की तपस्या ही है। इस तपस्या से उसका प्रेम पावन बन जाता है। छह वर्षों के बाद जब बाणभट्ट से उसकी अचानक मुलाकात होती है तो उसके प्रति निपुणिका की प्रेमभावना वासना से मुक्त हो चुकी

हो गया। उसने प्रश्न को दो दिशाओं को एकसूत्र कर दिया।

### 11.2.2 नारी चेतना की अभिव्यक्ति

द्विवेदी जी ने बाणभट्ट की आत्मकथा में नारी विषयक भारतीय दृष्टि को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। ई. सन् की छठी शताब्दी तक भारतीय समाज में नारी की स्थिति भोग्य वस्तु के रूप में बन चुकी थी। स्त्रियों का अपहरण और उनकी खरीद फरोख्त सामान्य बात हो गयी थी। बाणभट्ट की आत्मकथा में भट्टिनी इसकी शिकार है। वह प्रतापी सम्राट तुवर मिलिन्द की कन्या है। पर दस्यु उसका अपहरण कर लेते हैं और उसे हर्षवर्द्धन के एक सामन्त के हाथों बेच देते हैं। निपुणिका और बाणभट्ट के प्रयत्न से उसका उद्धार होता है। इस सामन्त के अन्तःपुर में अपहृता बालिकाओं की भरमार है। महामाया भैरवी भी एक अपहृता बालिका है, जिसका विवाह धूर्तों ने महाराज ग्रहवर्मा से करा दिया था। वह अन्तःपुर में रो रो कर दिन बिता रही है और अन्त में संन्यास लेकर मुक्त होती है। वह एक जनसभा को सम्बोधित करती हुई कहती है : *"इस उत्तरापथ में लाख लाख निरीह बहुओं और बेटियों के अपहरण और विक्रय का व्यवसाय क्या नहीं चल रहा है?" (पृ.202)" मैं तुम्हारे देश की लाख लाख अवमानित, लांछित और अकारण दंडित बेटियों में से एक हूँ। कौन नहीं जानता कि इस घृणित व्यवसाय के प्रधान आश्रय सामन्तों और राजाओं के अन्तःपुर हैं? आपमें से किसे नहीं मालूम कि महाराजाधिराज की चामरधारिणियाँ और करंकवाहिनियाँ इसी प्रकार भगायी हुई और खरीदी हुई कन्याएँ हैं ! "(पृ.203)* इसी प्रकार निपुणिका की व्यथा उसके इन प्रश्नों से प्रकट होती है, जिन्हें वह बाणभट्ट से पूछती है--' *मेरी शीशपथ करके तुम सत्य सत्य कहो, मेरा कौन सा ऐसा पाप-चरित्र है जिसके कारण मैं निदारुण दुःख की भट्ठी में आजीवन जलती रही? क्या स्त्री होना ही मेरे सारे अनर्थों की जड़ नहीं है?* "(पृ. 245)

इस पृष्ठभूमि में द्विवेदी जी ने नारी महिमा का जो रूप खड़ा किया है, वह अनूठा है। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में एक भी ऐसा नारी पात्र नहीं है, जो अपने चरित्र से स्त्री की गरिमा को बढ़ाता न हो। भट्टिनी, निपुणिका, महामाया, सुचरिता आदि सभी प्रमुख नारी पात्र स्त्री का ऐसा आदर्श सामने रखते हैं, जो वंदनीय है। विभिन्न पात्रों के द्वारा नारी के सम्बन्ध में व्यक्त कराए गये विचार भी द्विवेदी जी के नारी विषयक दृष्टिकोण को स्पष्ट करते है। महामाया भैरवी भट्टिनी से कहती है-- *'हाँ बेटी, नारीहीन तपस्या संसार की भद्दी भूल है। यह धर्मकर्म का विशाल आयोजन, सैन्यसंगठन और राज्य व्यवस्थापन सब फेन-बुदबुद की भाँति विलुप्त हो जाएँगे; क्योंकि नारी का इसमें सहयोग नहीं है। यह सारा ठाट-बाट संसार में केवल अशान्ति पैदा करेगा।'* (पृ.156) महामाया 'नारी तत्त्व' की व्याख्या करती है--"जहाँ कहीं अपने आपको उत्सर्ग करने की, अपने आप को खपा देने की भावना प्रधान है, वहीं नारी है। जहाँ कहीं दुःखसुख की लाख लाख धाराओं में अपने को दलित द्राक्षा के समान निचोड़ कर दूसरे को तृप्त करने की भावना प्रबल है, वहीं 'नारी तत्त्व' है, या शास्त्रीय भाषा में कहना हो, तो 'शक्ति तत्त्व' है।" (पृ.156) बाणभट्ट प्रथम बार सुचरिता को देखकर अपने भाव व्यक्त करता है : *"मुझे बार बार बराहमिहिर की याद आती रही और मैं उनकी सहृदयता पर मुग्ध हुए बिना नहीं रहा। उन्होंने ठीक ही कहा है,स्त्रियाँ ही रत्नों को भूषित करती हैं, रत्न स्त्रियों को क्या भूषित करेंगे ! आज यदि बराहमिहिर यहाँ उपस्थित होते, तो और भी आगे बढ़कर कहते-- धर्म-कर्म,भक्ति-ज्ञान,शान्ति-सौमनस्य कुछ भी नारी का संस्पर्श पाये बिना मनोहर नहीं होते-- नारी-देह वह स्पर्शमणि है, जो प्रत्येक*

ईंट-पत्थर को सोना बना देती है।" (पृ.186) अवधूत अघोरभैरव महामाया से कहते हैं--' मैं सारे जीवन नारी की उपासना करता रहा हूँ। मेरी साधना अपूर्ण रह गयी है। तुम विशुद्ध नारी बन कर मेरा उद्धार करो--विशुद्ध नारी-त्रिपुरभैरवी।' (पृ.239) बाणभट्ट निपुणिका के प्रसंग में चिन्तन करता है--"नारी से बढ़ कर अनमोल रत्न और क्या हो सकता है? पर उससे अधिक दुर्दशा किसकी हो रही है? मुझसे निपुणिका क्या आशा रखती है? अवधूतपाद की साधना इसलिए अधूरी है कि उन्हें विशुद्ध नारी का सहयोग नहीं मिला और निपुणिका की बलिदानाकांक्षा इसलिए अपूर्ण है कि उसे पुरुष का करावलम्ब नहीं मिला।" (पृ.246)

भट्टिनी के रूप में एक आदर्श परंपरागत नारी का रूप भी साकार हो उठा है। बाणभट्ट के शब्दों में, "लौट कर जब आया, तो भट्टिनी मेरे आहार का आयोजन कर रही थीं। उनकी आँखें इस समय प्रसन्न दिख रही थीं और शरीर में एक प्रकार का लाघव-भाव स्पष्ट ही लक्षित हो रहा था।"(पृ.60) जब बाणभट्ट विनयपूर्वक इसका विरोध करता है तो भट्टिनी उत्तर देती है: "मुझे इतना अधिकार मिलना चाहिए भट्ट, कि अपनी बुद्धि से निर्णय कर सकूँ कि कौन सा गौरव किसे मिलना चाहिए।" भट्टिनी के इस उत्तर में भारतीय नारी का अपने अधिकारों के प्रति सचेत होकर सोचने का संकेत मिलता है।

सेवा भावी सम्मोहन की क्लान्ति से रुग्ण बाणभट्ट की परिचर्या में भी भट्टिनी एक आदर्श भारतीय नारी की भूमिका निभाती है। बाणभट्ट के देर तक बाहर बैठने का निषेध करती हुई भट्टिनी कहती है--'भट्ट, दुर्बल शरीर लेकर रात भर बाहर बैठना तो उचित नहीं है।' वह उसे भीतर जाकर सोने का आदेश देकर चली जाती है। यहाँ भी नारी का भव्य वत्सल रूप प्रकट हुआ है।

द्विवेदी जी भी मानते हैं कि जो प्रेम लोकमंगल के भाव और कर्तव्यबोध से सम्पन्न नहीं होता, वह एकांगी और क्षणिक होता है। भट्टिनी का बाणभट्ट के प्रति प्रेम लोकमंगल, अपितु विश्वमंगल, की भावना से जुड़कर अत्यन्त मनोहर बन गया है। भट्टिनी की कामना है कि भारतवर्ष बार बार क्रूर और आततायी 'प्रत्यन्त दस्युओं ' से पादाक्रान्त न हो, उनके द्वारा स्त्रियों और बच्चों का, ब्राह्मणों और श्रमणों का, वृद्धों और बालिकाओं का संहार न हो, मन्दिरों और विहारों का ध्वंस न हो, ग्राम और नगर जला कर भस्मीभूत न किए जाएँ। महामाया इस समस्या के समाधान के लिए जनजागरण का सन्देश देती हैं। भट्टिनी महामाया से सहमत है कि 'राजाओं और राजपुत्रों की ओर ताकते रहने से आर्यावर्त का उद्धार नहीं होगा।' पर उसकी दृष्टि में यह अर्ध सत्य है। वह एक ऐसे विश्व की कल्पना करती है कि जिसमें युद्ध हो ही नहीं। वह इस सत्य को सामने रखना चाहती है कि 'यवन' और भारतवासी दोनो ही मनुष्य हैं। महामाया जिन्हें यवन कह रही हैं, भट्टिनी की दृष्टि में वे भी 'मनुष्य' हैं, "भेद इतना ही है कि उनमें सामाजिक ऊँचनीच का ऐसा भेद नहीं है। जहाँ भारतवर्ष के समाज में एक सहस्र स्तर हैं वहाँ उनके समाज में कठिनाई से दो तीन होंगे।"(पृ. 271) वह बाणभट्ट से कहती है--" तुम उनके दुर्द्धर्ष रूप को जानते हो, उनके कोमल हृदय को एकदम नहीं जानते। क्यों भट्ट, ऐसा क्या नहीं हो सकता कि ऊँची भारतीय साधना उन तक पहुँचायी जा सके और निकृष्ट सामाजिक जटिलता यहाँ से हटायी जा सके। जब तक ये दानो बातें साथ साथ नहीं हो जाती तब तक शाश्वत शान्ति असम्भव है।" (पृ.271) वह बाणभट्ट से इसी 'पूर्ण सत्य' का प्रचार करने को कहती है। भट्टिनी को भारतीय भागवत धर्म में यह पूर्णता दिखाई देती है। वह बाणभट्ट से कहती है--" तुम इस म्लेच्छ कही जाने वाली निर्दय जाति के चित्त में समवेदना का संचार कर सकते हो,उन्हें स्त्रियों का सम्मान करना सिखा सकते हो,बालकों को प्यार करना सिखा सकते हो।"(पृ. 271) वह एक गहरी पीड़ा के साथ कहती है--'एक जाति दूसरी को म्लेच्छ समझती है, एक मनुष्य

## 11.2.3 संस्कृति और समन्वयात्मकता

*बाणभट्ट की आत्मकथा* में भारतीय संस्कृति के स्वरूप की चर्चा भी अनेक प्रसंगों में आयी है। भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता उसकी समन्वयात्मकता मानी जाती है। वैदिक काल से लेकर आज तक भारतीय संस्कृति अनेक समान और परस्पर विरोधी विचारों के संयोग और घात प्रतिघात से अपना रूप ग्रहण करती रही है। ब्राह्मण और श्रमण संस्कृतियाँ तो भारत में बहुत प्राचीन काल से साथ साथ चलती आयी हैं। दोनो में विरोध कम नहीं रहा है, पर उनमें समन्वय भी होता रहा है। बौद्ध और जैन धर्म के अनेक तत्व ब्राह्मण संस्कृति ने अपनाए जरूर हैं, लेकिन समानता, स्वतंत्रता और न्याय, जो कि बौद्ध और जैन धर्म के मूलभूत तत्व हैं, हिंदू धर्म और ब्राह्मण संस्कृति ने कभी भी नहीं अपनाए। आज भी स्वतंत्र भारत में जन्म के आधार पर ही इन्सान की जाति का निर्धारण होता है और उसके आधार पर समाज में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक स्थिति भी तय होती है। हिंदू धर्म जिस असमानता, भेदभाव और जाति व्यवस्था में विश्वास करता है, उससे समन्वयात्मक संस्कृति का निर्माण होने में आज भी बाधाएं उत्पन्न हो रही है। समन्वय ही भारतीय संस्कृति की धरोहर रही है और जहाँ कहीं इस समन्वयात्मक विचारों में दरार आई है, जनजीवन को दुःखों और संकटों का सामना करना पड़ा है। बाणभट्ट की आत्मकथा में भारतीय संस्कृति के इस केन्द्रीय पक्ष को महत्व दिया गया है।

पाँचवी-छठी शताब्दी में बौद्ध धर्म से ही वाममार्गी साधनाएँ भी विकसित हो गयी थीं। सौगत तन्त्र उन्हीं में से एक था जो नैरात्म्य भावना की साधना पर बल देता था। इस साधना में 'तुम और मैं', 'स्त्री और पुरुष', 'बुद्ध और बद्ध' का भेद त्यागने तथा अपने प्रिय से प्रिय व्यक्ति को भी त्याग सकने के साहस की आवश्यकता होती थी।बाणभट्ट की आत्मकथा में विरतिवज्र (अमितकान्ति) इस साधना के योग्य सिद्ध नहीं होता, क्योंकि उसने अपनी पत्नी और असहाय माता को त्याग कर वैराग्य धारण किया है और उनके मोह-जाल को काटने में वह समर्थ नहीं है। अतः सौगत तन्त्र के साधक अमोघवज्र, जिनका वह शिष्य है, उसे कौलाचार्य अघोर भैरव के पास भेजते हैं। अवधूत अघोर भैरव विरतिवज्र को कौल मार्ग के योग्य तो समझते हैं, पर इस मार्ग में शक्ति (स्त्री) के बिना साधना नहीं हो सकती। विरतिवज्र की पत्नी सुचरिता उनके साथ नहीं है। उपन्यास में कौल साधना का पर्याप्त विस्तार के साथ वर्णन किया गया है। यह साधना भी गुह्य है, जिसमें मदिरा सेवन, मन्त्रजाप, शवसाधना, शक्ति साधना आदि की प्रधानता है। पर इस साधना मार्ग के गुरु, अघोर भैरव, के चरित्र में एक महान सन्त के सारे गुण विद्यमान हैं। वे सच्चे साधक हैं। उनमें मनुष्य के प्रति अगाध करुणा का भाव है। ब्राह्मण धर्म और वैदिक अनुष्ठानों में उनका विश्वास नहीं है, क्योंकि उनमें पाखंड की प्रधानता हो गयी है। अघोर भैरव इस पाखंड के विरोधी हैं। वे बाणभट्ट को उपदेशित करते हैं कि "डरना नहीं चाहिए। जिस पर विश्वास करना चाहिए, उस पर पूरा विश्वास करना चाहिए, चाहे परिणाम जो हो। जिसे मानना चाहिए, उसे अन्त तक मानना चाहिए।"(पृ.80) वे फिर कहते हैं--" *देख रे, तेरे शास्त्र तुझे धोखा देते हैं। जो तेरे भीतर सत्य है, उसे दबाने को कहते हैं ; जो तेरे भीतर मोहन है, उसे भुलाने को कहते हैं ; जिसे तू पूजता है, उसे छोड़ने को कहते हैं।*" (पृ.82) वे अमंगल से भयभीत बाणभट्ट से कहते हैं, " तू अमंगल को मंगल क्यों नहीं मान लेता?" वे उसे फिर समझाते हैं--" देख बाबा, भटकता न फिर। इस ब्रह्मांड का प्रत्येक अणु देवता है। देवता ने जिस रूप में तुझे सबसे अधिक मोहित किया है, उसी की पूजा कर।"(पृ.83) वे बाणभट्ट को मन्त्र देते हैं--" किसी से न डरना, गुरु से भी नहीं, मन्त्र से भी नहीं, लोक से भी नहीं, वेद से भी

Scanned by TapScanner

लेने, स्वाभाविक वृत्तियों का, मन के भीतर के सत्य का दमन न करने, अपने उपास्य पर अखंड विश्वास करने, उसके प्रति निष्काम भाव से समर्पित होने आदि के विचार भारतीय संस्कृति के प्रमुख स्वर हैं, जिनका बाणभट्ट की आत्मकथा में मनोहर प्रसंगों के माध्यम से प्रतिपादन किया गया है।

इस प्रकार बाणभट्ट की आत्मकथा में भारतीय जीवन दृष्टि के अनेक पक्षों का सुन्दर अंकन किया गया है।

## 11.3 बाणभट्ट की आत्मकथा : संरचना और शैली

उपन्यास एक कलावस्तु है। ललित कला के पाँच प्रमुख भेदों में एक **साहित्य कला** भी है और उपन्यास साहित्य की ही एक विधा है। उपन्यास भी, साहित्य की ही तरह, शब्दों की कला है। उपन्यास एक ऐसी कला है जिसमें उपन्यासकार की संवेदना, उसके अनुभव और विचार, शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त होते हैं। उपन्यासकार के द्वारा प्रयुक्त शब्द पाठक के मानस में एक रचना संसार का निर्माण करते हैं। वह रचना संसार पाठक के मन में ही निर्मित होता है। उपन्यास पढ़ते समय आप अनुभव करते होंगे कि जैसे-जैसे आप शब्द, वाक्य, पैराग्राफ और पृष्ठ दर पृष्ठ पढ़ते जाते हैं आपके मन में एक रचना संसार भी निर्मित होता चलता है, और जब आप पूरी किताब पढ़ जाते हैं तब आपके मानस में एक पूरा कथा संसार रच जाता है। उस कथा संसार का, आपकी चेतना के बाहर, कोई अस्तित्व नहीं होता। फिर भी आप अनुभव करते होंगे कि, अगर **वही** नहीं, तो एक वैसा ही संसार आपके आसपास, चारो ओर, अवश्य विद्यमान है। यही उपन्यास की कलावस्तु के रूप में पहचान है।

*बाणभट्ट की आत्मकथा* की अगली समस्या कथा संसार की प्रस्तुति की प्रविधि से सम्बद्ध है। प्रत्येक उपन्यासकार के सामने एक चुनौती भरा प्रश्न यह होता है कि वह अपने कथा संसार को किस अवलोकन बिन्दु से प्रस्तुत करे। ऐतिहासिक उपन्यास की पूर्वप्रचलित प्रविधि किस्सागोई की है, पर द्विवेदी जी ने इसे नहीं चुना है। किस्सागोई की प्रविधि में किस्सागो की वर्तमानता, सर्वज्ञता, स्वेच्छाचारिता आदि के कारण एक तरह का सन्देह या अविश्वसनीयता का वातावरण बना रहता है। पर जब कथा का कोई पात्र ही किस्सागो की भूमिका ग्रहण कर लेता है और

Scanned by TapScanner

## 11.4 संवाद योजना

आत्मकथा के बीच बीच में संवादों की योजना भी अत्यन्त कलात्मक रूप में की गयी है। इन वार्तालापों में बाणभट्ट के साथ कोई दूसरा पात्र शामिल होता है। इन संवादों की भाषा अत्यन्त सहज, विदग्धतापूर्ण, संवादरत पात्रों के मनोभावों की व्यंजक, संकेतपूर्ण और कौतूहलोत्पादक है। ये वार्तालाप केवल पात्रों की मनोदशाओं को ही व्यक्त नहीं करते वरन् कथा को आगे बढ़ाने में भी योग देते हैं। एक उदाहरण देखा जा सकता है :

Scanned by TapScanner

'निउनिया, कल सौभाग्य से मुझसे तेरी मुलाकात हो गयी थी।'

'हाँ भट्ट !'

'मैं सोचता हूँ कि कहीं तू अकेली ही भट्टिनी को लेकर इधर आयी होती, तो कितना कष्ट होता।'

'सो तो होता ही।'

'इस समय मैं जो कुछ कह रहा हूँ उस समय उतना भी तो नहीं हो पाता !'

'इतना तो हो जाता भट्ट !'

'कौन करता भला?'

'पुजारी !'

'पुजारी? पर तू तो पुजारी से डरी हुई थी निउनिया !'

'पुजारी जैसे मूर्ख रसिकों से डरती, तो निउनिया आज से छः वर्ष पहले ही मर गयी होती,

भट्ट !'

'पर तू प्रत्यूष काल में डरी हुई जरूर थी।'

'सो तो थी ही।'

'तो तू किससे डरी थी भला?'

'तुमसे !'

'मुझसे?'

'हाँ भट्ट, तुमसे !'

'तो मुझसे क्यों डरी थी, निउनिया !'

'क्या बताऊँ, भट्ट! मेरे जैसी स्त्री तुम्हारे जैसे पुरुष से क्यों डरती है, यह बात अगर आज तक तुम्हारी समझ में नहीं आयी तो अब नहीं आएगी।' (पृ.58-59)

इस संवाद का सौन्दर्य अपने आप में अनूठा है। बाणभट्ट से संवाद करती निपुणिका की भाषा में सर्वत्र एक लीला और चुहल का भाव दिखाई देता है। इसका कारण यह है कि वह बाणभट्ट से प्रेम भी करती है और उसके प्रति श्रद्धा भी रखती है। छह वर्षों के घोर प्रायश्चित्त से उसके प्रेम में एक ऐसी स्थिरता आ गयी है, जो डिगने वाली नहीं।

बाणभट्ट की आत्मकथा के अधिकतर संवादों में बाणभट्ट समान रूप से विद्यमान रहता है, पर अन्य पात्र बदलते रहते हैं। आत्मकथा की प्रविधि में कही गयी कथा में यही स्वाभाविक भी है। फिर भी बाणभट्ट की भाषा में एकरसता नहीं है। उसकी भाषा उसकी मनःस्थितियों के अनुरूप परिवर्तित होती रहती है। जहाँ वह भट्टिनी से बात करता होता है, उसकी भाषा में श्रद्धा, कृतज्ञता और विह्वलता का आवेग होता है। निपुणिका से बात करते समय उसकी मनःस्थिति अभिभावक और वरिष्ठ सखा की होती है। पर जहाँ उसे किसी ऐसे व्यक्ति से बात करनी होती है, जो भट्टिनी का समुचित समादर नहीं करता, वहाँ उसकी भाषा में अद्भुत ओज, आत्मविश्वास, आत्मगौरव, भयहीनता, स्पष्टवादिता और उत्तेजना का भाव आ जाता है। एक ऐसा ही प्रसंग बाणभट्ट और कुमार कृष्णवर्धन के वार्तालाप का है। इस संवाद का एक ओजदृप्त अंश है : कुमार, साम्राज्य गर्व में अन्धे न बनो। स्थाण्वीश्वर ने राजलक्ष्मी का अपमान किया है। और, ब्राह्मण पर तुम्हारा कोप व्यर्थ है। वह न भिखारी होता है न सान्धिविग्रहिक। वह धर्म का व्यवस्थापक होता है। मैंने जो कुछ किया है, उससे न मैं लज्जित हूँ, न मेरा ब्राह्मणत्व कलुषित हुआ है। मैं देवपुत्र तुवरमिलिन्द की मर्यादा का पूर्ण जानकार हूँ और निर्भय भाव से फिर कहता हूँ कि स्थाण्वीश्वर के राजवंश ने अपने को पूज्य-पूजन के अयोग्य सिद्ध किया है। (पृ. 67)

Scanned by TapScanner

का अतिक्रमण कर ये साधक मानवीय कर्म की ओर प्रेरित करती है और मानवमात्र की एकता की अनिवार्यता का प्रतिपादन करते है। धर्म साधना के क्षेत्र में कल्पित पात्रों की भूमिका इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो द्विवेदी जी की दृष्टि को स्पष्ट करती है।

## 11.6 सारांश

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि 'बाणभट्ट की आत्मकथा' एक विशिष्ट कलात्मक उपन्यास है। एक निश्चित दृष्टि के कारण उपन्यासकार ने वस्तु-संरचना और शिल्प-विन्यास का बड़ा ही कुशलतापूर्वक संयोजन किया है। कथ्य के महत्व को शिल्पगत विशिष्टता ने मार्मिकता से प्रस्तुत किया है। संक्षेप में कह सकते है कि 'बाणभट्ट की आत्मकथा' कथ्य और अभिव्यक्ति कौशल का उत्कृष्ट उपन्यास है।

समग्रता में बाणभट्ट की आत्मकथा एक श्रेष्ठ कलात्मक उपन्यास है। औपन्यासिक विजन से लेकर उसकी प्रस्तुति तक, सारा आयोजन, कुछ छोटी मोटी खामियों के बावजूद, अत्यंत भव्य रूप में प्रस्तुत किया गया है। बाणभट्ट की आत्मकथा हिन्दी साहित्य की विशिष्ट रचना है, जिसने हिंदी उपन्यास साहित्य को समृद्ध बनाया है।

## 11.7 प्रश्न

1. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' एक ऐतिहासिक रचना है, क्या यह रचना समसामयिक समस्याओं, चिंताओं को भी अभिव्यक्ति देने में सफल हुई है?

2. महामाया भैरवी और भट्टिनी तत्कालीन हिंदू समाज में व्याप्त जातिभेद, स्तरभेद और स्त्री के शोषण का विरोध करके किस प्रकार के समाज स्थापना की परिकल्पना की थी। विस्तार से लिखिए।

3. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' जिस प्रकार तत्कालीन युगीन यथार्थ को उद्घाटित करती है, उसी प्रकार आज के वास्तविक धरातल को भी अभिव्यक्ति दे रही है। उदाहरण देकर विस्तार से लिखिए।

4. 'बाणभट्ट की आत्मकथा में नारी-चेतना की अभिव्यक्ति' पर लगभग 200 शब्दों में एक निबंध लिखिए।

5. क्या उपन्यास की संवाद योजना कथा को आगे बढ़ाने में सहयोग देती है? उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।

Scanned by TapScanner

# इकाई 12 बाणभट्ट की आत्मकथा का शिल्प

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य
12.1 प्रस्तावना
12.2 आत्मकथात्मकता
12.3 रोमांस के तत्व
12.4 इतिहास और कल्पना का सर्जनात्मक मिश्रण
12.5 सारांश
12.6 अभ्यास/प्रश्न

## 12.0 उद्देश्य

इकाई 11 में आपने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की जीवनदृष्टि और संरचना और शैलीगत विशेषताओं का परिचय प्राप्त कर लिया है। इस प्रक्रिया में उपन्यास की वस्तु-संरचना, प्रेम का स्वरूप, उसके सामाजिक-राष्ट्रीय निहितार्थ, इतिहास बोध के साथ-साथ समसामयिक सामाजिक यथार्थ, और स्वाधीनता आंदोलन के लिए उपन्यास में व्यक्त दिशा-संकेत आदि सभी महत्वपूर्ण बिंदुओं पर विचार किया गया है। अब आपके सामने प्रस्तुत है इकाई 12, इस इकाई में आप :

- 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में आत्मकथात्मकता के तत्व को समझ सकेंगे,
- उपन्यास में चित्रित रोमांस की स्थितियों और विशिष्टता से अवगत हो सकेंगे,
- इतिहास और कल्पना के सामंजस्य के द्वारा वर्तमान स्थिति की जटिलता को समझ सकेंगे।

## 12.1 प्रस्तावना

हजारीप्रसाद द्विवेदीजी ने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास आत्मकथा पद्धति पर लिखा है। हर्षकालीन भारतवर्ष के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परिवेश से कथावस्तु का चयन किया है। इसके कुछ महत्वपूर्ण पात्र ऐतिहासिक है, जैसे बाण, हर्षवर्धन, कृष्णवर्धन, शीलभद्र, राज्यश्री और जयन्त भट्ट। इस उपन्यास में चित्रित प्रसंग, शहर, नगर सभी ऐतिहासिक है, लेकिन पात्रों के आस-पास घटने वाली घटनाएँ और उनके कार्य काल्पनिक है। उपन्यास का आधार संस्कृत के विद्वान बाणभट्ट की जीवन कथा है। द्विवेदी जी ने बाणभट्ट की जीवन-कथा को तत्कालीन युग के विभिन्न घटनाओं के साथ जोड़कर प्रस्तुत किया है। द्विवेदी जी ने पात्रों के अनुरूप उनसे संबंधित काल्पनिक घटनाओं की निर्मिति द्वारा ऐतिहासिक वातावरण का आभास निर्माण किया है। ऐतिहासिक कथावस्तु को आधार बनाकर वे सामाजिक विकास प्रक्रिया को वैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषित करते है। सामाजिक, सांस्कृतिक परंपराओं, रूढ़ि रीतियों, भेदभाव की नीतियों और मानव की प्रतिष्ठा को गिराने वाली जातियता की जड़ों को वे इतिहास के गर्भ से खोज निकालने की कोशिश करते है। आज के सामाजिक राजनीतिक संदर्भों को इतिहास की इन्हीं परंपराओं और संस्कारों के तहत तलाशते है। मानव समुदाय के विकास में अवरोध बनी इस जड़ परंपराओं को तोड़कर समानतामूलक समाज व्यवस्था को

Scanned by TapScanner

## 12.3 रोमांस के तत्व

रोमांस उपन्यास की पूर्ववर्ती साहित्य विधा है। जो बोलचाल की भाषा में लिखित ऐसी गद्यकथा होता था जिसका मुख्य विषय वीरतापूर्ण साहस-कर्म हुआ करता था। प्रेम कथाएँ और धार्मिक रूपक कथाएँ भी प्राय: इसमें मिलीजुली रहती थीं, पर ये इसके लिए अनिवार्य नहीं थीं। शौर्य और साहस का चित्रण ही इसका मुख्य उद्देश्य होता था। प्रारम्भ से ही इन रचनाओं में मोहक, दूरस्थ और अद्भुत तत्त्वों की प्रधानता होती थी। इनमें वर्णनात्मक ब्योरे विपुल मात्रा में हुआ करते थे तथा प्रेम कथाएँ अधिकतर सुखान्त होती थीं। इस विधा के उदाहरण गद्य और पद्य दोनो में मिलते हैं, पर सामान्यत:, परवर्ती काल में, गद्य ही इसका मुख्य माध्यम बना। यूरोपीय रोमांस की जो विशेषताएँ बतायी जाती हैं, वे संस्कृत में रचित बाणभट्ट कृत कादम्बरी, दंडी कृत दशकुमारचरित, सुबन्धु कृत वासवदत्ता आदि गद्यकाव्यों में भी उपलब्ध होती हैं। कथासरित्सागर की कथाओं में भी रोमांस के तत्व भरपूर मात्रा में मिलते हैं। संस्कृत और हिन्दी में इस विधा का विकास नहीं हुआ, यद्यपि अपभ्रंश और पुरानी हिन्दी में रचित प्रेमकाव्य इसके अवशेष के रूप में देखे जा सकते हैं।

प्रजाति की दृ;टि से **रोमांस** से जुड़े होने पर भी **उपन्यास** एक स्वतन्त्र साहित्य रूप है। क्लारा रीव ने अपनी टाइम ऐंड नावेल नामक पुस्तक में **उपन्यास और रोमांस** का अन्तर स्पष्ट क़रते हुए लिखा है कि उपन्यास वास्तविक जीवन और व्यवहार (मैनर्स) का चित्र है। वह अपने समय का दर्पण है। इसके विपरीत रोमांस की भाषा अतिशयोक्तिपूर्ण होती थी, जिसे क्लारा रीव ने 'उदात्त और उन्नीत भाषा' (लॉश्टी ऐंड एलिवेटेड लैंग्वेज) कहा है। रोमांस, क्लारा रीव के अनुसार, वैसी बातों का वर्णन करता है, जो न कभी घटीं और न जिनके कभी घटने की सम्भावना है। उपन्यास प्रतिदिन हमारी आँखों के सामने गुजरने वाली चीजों

Scanned by TapScanner

## 12.4 इतिहास और कल्पना का सर्जनात्मक मिश्रण

उपन्यास , कथा की दृष्टि से, इतिहास के बहुत निकट होता है। गद्य में लिखित कथा दोनो में होती है, पर उपन्यास की कथा जहाँ कल्पना प्रधान होती है, वहाँ इतिहास की कथा तथ्याधारित होती है। उपन्यास की कथा कल्पना प्रधान होते हुए भी यथार्थ होती है जबकि इतिहास की कथा मात्र तथ्य होती है जिसके लिए जरूरी नहीं कि वह यथार्थ ही हो। वस्तुत: यथार्थ का सम्बन्ध अनुभव और संवेदना से है जिसकी गुंजायश इतिहास में न के बराबर होती है। इतिहास की कोई भी घटना तथ्य रहित नहीं हो सकती, जबकि उपन्यास में इसकी कोई जरूरत नहीं होती।

किन्तु ऐतिहासिक उपन्यास की स्थिति कुछ भिन्न होती है। इसमें दो परस्परविरोधी तत्व, इतिहास और कल्पना, आपस में मिलकर औपन्यासिक कथासंसार का निर्माण करते हैं। इतिहास में कल्पना की कोई गुंजायश नहीं होती। उपन्यासकार इतिहास से लिए गए तथ्यों में कोई परिवर्तन नहीं कर सकता। पर ऐतिहासिक उपन्यासकार अपने को इतिहास तक सीमित नहीं रखता। वह अतीत के उन कोनों या क्षेत्रों को अपनी रचना का विषय बनाता है, जहाँ इतिहास साक्ष्य के अभाव में नहीं पहुँच पाता। ऐसे ही क्षेत्रों में उसकी कल्पना को सक्रिय होने का अवसर मिलता है, यद्यपि वहाँ भी कल्पना के पंख तत्कालीन ऐतिहासिक यथार्थ या सम्भावनाओं के अनुशासन में बँधे रहते हैं। उपन्यासकार की कल्पना की सक्रियता ऐतिहासिक पात्रों के चरित्र-निर्माण और उनके अन्तर्जगत् के चित्रण में भी सम्भव होती है, क्योंकि

Scanned by TapScanner

बाणभट्ट की आत्मकथा का एकपात्र है धावक,जो हर्ष का राजकवि है। धावक को कुछ यूरोपीय विद्वान् लोकभाषा का कवि मानते हैं। द्विवेदी जी ने उसे एक हास्यप्रिय, मस्तमौला कवि के रूप में प्रस्तुत किया है। विद्वानों का यह भी अनुमान है कि हर्ष के नाम पर प्रचलित नाटिकाएँ, प्रियदर्शिका, रत्नावली और नागानन्द धावक या बाणभट्ट की लिखी हुई हैं। द्विवेदी जी ने यह अनुमान प्रस्तुत किया है कि ये रचनाएँ लिखी हुई तो श्रीहर्ष की ही हैं, पर उनके आज्ञानुसार बाणभट्ट ने उनमें कुछ परिवर्तन किए और एक श्लोक में अपना नाम 'दक्ष' भी कुशलता के साथ जोड़ दिया। यह सम्भावना इतिहासविरोधी नहीं है। पर बाणभट्ट के तीन पात्र, तुवर मिलिन्द, लोरिकदेव और ईश्वरसेन हमारे इतिहास बोध को चुनौती देते प्रतीत होते हैं। उपन्यास के उपसंहार में 'व्योमकेश शास्त्री' ने ऐतिहासिक दृष्टि से तुवर मिलिन्द को एक 'समस्या' बताया है। पर, उपन्यास में यह 'समस्या' द्विवेदी जी की ही खड़ी की हुई है। इतिहास ग्रन्थों में इस नाम का कोई ऐतिहासिक व्यक्ति नहीं मिलता। बौद्ध साहित्य में मिलिन्दपन्हो नाम का एक प्रसिद्ध ग्रन्थ मिलता है जिसमें यवन राजा मिलिन्द और बौद्ध भिक्षु नागसेन के बीच प्रश्न और उत्तर के रूप में बौद्ध दर्शन और धर्म की विवेचना की गयी है। मिलिन्द की पहचान भारतीय यवन (यूनानी) राजा मिनांडर से की गयी है। मिनांडर का शासन काल 160 ई.पू. से 140 ई.पू. तक था और उसकी प्रसिद्धि एक शक्तिशाली राजा के रूप में थी। विश्वास किया जाता है कि मिनांडर ने बौद्ध धर्म अंगीकार कर लिया था।

Scanned by TapScanner

अनुभव, यथार्थ के प्रति आग्रह और मूल्यबोध प्रमुख स्थान रखता है। इन तथ्यों के बावजूद 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में रोमानियत का अभाव अवश्य मिलता है। रोमांस के तत्वों के समावेश के कारण इस उपन्यास में रमणीयता की वृद्धि हुई है। अतः कहा जा सकता है कि उपन्यास होते हुए भी 'बाणभट्ट की आत्मकथा' रोमानी तत्वों से भरपूर एक विशिष्ट उपन्यास है।

बाणभट्ट की आत्मकथा में इतिहास और कल्पना का बहुत सर्जनात्मक मिश्रण किया गया है। उपन्यास में इतिहास को उतना महत्व नहीं मिला है, जितना 'ऐतिहासिक यथार्थ' को। उपन्यासकार की कल्पना 'इतिहास' से नियन्त्रित होती हुई भी उसका अतिक्रमण करती है। इसमें सन्देह नहीं कि बाणभट्ट की आत्मकथा ने हिन्दी में 'ऐतिहासिक उपन्यास' को एक नयी दिशा प्रदान की।

## 12.6 अभ्यास / प्रश्न

1) 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की आत्मकथात्मकता पर विस्तार से प्रकाश डाले।
2) 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में रोमांस का किस मात्रा में सम्मिश्रण हुआ है - स्पष्ट करें।
3) रोमांस और उपन्यास के अंतर को स्पष्ट करते हुए सिद्ध करें कि 'बाणभट्ट की आत्मकथा' रोमांस है या उपन्यास।
4) बाणभट्ट की आत्मकथा में कल्पना के उपयोग द्वारा रचना का सौंदर्य और ऐतिहासिक यथार्थ में बाधा उत्पन्न नहीं हुई है - स्पष्ट कीजिए।
5) नारी-मुक्ति की आवश्यकता और जातीय विषमता पर प्रहार करने हेतु बाणभट्ट की आत्मकथा में द्विवेदी जी ने कौन से पात्रों का निर्माण किया है?

Scanned by TapScanner

चाहिए। सबसे बड़ा खतरा इस मनुष्यता के ऊपर ही दिखाई देता है। इसीलिए आचार्य वसुभूति का यह कथन बहुत प्रासंगिक लगता है--

'क्या ब्राह्मण और क्या श्रमण, मनुष्यता दोनों ही जगह विरल है कुमार।'

इसमें तनिक संदेह नहीं है कि साम्प्रदायिक मतवादों और विधि-विधानों ने मनुष्य को उसके लक्ष्य और प्रकृति से बहुत हद तक परे धकेल दिया है। 'सत्य वह होता है जिससे लोक का आत्यंतिक कल्याण होता है।' लेकिन मनुष्य स्वार्थ के वशीभूत लोक-कल्याण के व्यापक लक्ष्य से भटक जाता है। इस उपन्यास में स्वार्थपरता के विरूद्ध लोक कल्याण की भावना को महत्व दिया गया है। 'राज्य-गठन, सैन्य संचालन, मठस्थापन और निर्जनवास पुरुष की समताहीन, मर्यादाहीन, श्रृंखलाहीन महत्वाकांक्षा के ही परिणाम हैं।' कहने का तात्पर्य यह है कि जब तक पुरुष स्त्री की इच्छा-आकांक्षा का सम्मान करना नहीं सीखेगा तब तक दुनिया में दुर्द्धर्ष संघर्ष होते रहेंगे। स्त्री का सहयोग और उसके साथ समानता की भावना से इन अमानवीयताओं पर अंकुश लगता है क्योंकि स्त्री शक्ति और प्रकृति का प्रतीक है। वह पुरुष को मानव-कल्याण के उच्चतर मूल्यों की ओर ले जाने में समर्थ होती है।

Scanned by TapScanner

## 13.5 नारी चेतना के स्वर

'मैं तुम्हारे देश की लाख-लाख अवमानित, लांछित और अकारण दण्डित बेटियों में से एक हूं। कौन नहीं जानता कि इस घृणित व्यवसाय के प्रधान आश्रय सामंतों और राजाओ के अंत:पुर हैं।'

'मत्यु का भय माया है, राजा से भय दुर्बल चित्र का विकल्प है। प्रजा ने राजा की सृष्टि की है। संघटित होकर म्लेच्छ वाहिनी का सामना करो। देवपुत्रों और महाधिराजों की आशा छोड़ो।'

महामाया के उपर्युक्त कथन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सामंती शासन-व्यवस्था में नारी मात्र भोग्या बनकर रह गई थी। जीवन भर अपमान, लांछन और यातना सहने के लिए वह बाध्य थी। राजाओं और सामंतों के अंत:पुर की शोभा बढ़ाने एवं वासनापूर्ति के लिए असहाय-गरीब जनता की बहू-बेटियों को बलपूर्वक अपहृत किया जाता था। यह समस्त कार्य-व्यापार अबाध गति से इसलिए चलता था क्योंकि जनता में यह धारणा गहराई तक पैठी हुई थी कि राजा देवता का रूप होता है, उसकी शक्ति ईश्वरीय होती है। अबोध जनता इस

Scanned by TapScanner

## 13.6 मानवता की प्रतिष्ठा

23/05/2010

'बाणभट्ट की आत्मकथा' की प्रासंगिकता इस बात में है कि यहाँ लोक, वेद, गुरू, राजा, सामंत, श्रमण और ब्राह्मण की अपेक्षा मनुष्य मात्र की प्रतिष्ठा पर बल दिया गया है। मनुष्यता की अवधारणा के पीछे तर्क यह है कि इसमें समता और न्याय की भावना निहित होती है। किसी धर्म, सम्प्रदाय, देश, जाति में उत्पन्न होने के बावजूद यह मनुष्यता ही ऐसा तत्व है जो सभी को बराबरी के स्तर पर खींच लाता है। इस उपन्यास में इसी मानवीय प्रेम की अवधारणा को स्थापित करने का प्रयत्न दीखता है। निपुणिका दलित है और नारी भी है लेकिन लेखक उसके चारित्रिक विकास को इतने संयम और उदारता के साथ चित्रित करता है कि वह सहज ही पाठकीय संवेदना और आदर की अधिकारिणी बन जाती है। नारी शक्ति का अनादर और उपेक्षा करने वाले भूल जाते हैं कि स्त्री जाति में धैर्य, संयम, सहनशीलता के बावजूद विद्रोह

Scanned by TapScanner

## 13.8 धार्मिक वर्चस्व

'बाणभट्ट की आत्मकथा' में बौद्ध धर्म और वैदिक धर्म के आपसी संघर्ष को भी चित्रित किया गया है। इससे धर्म की असलियत सामने आ जाती है और मनुष्य के लिए इसकी उपयोगिता-अनुपयोगिता भी स्पष्ट हो जाती है। सुचरिता स्थिति का सटीक व तथ्यपूर्ण विश्लेषण इस प्रकार प्रस्तुत करती है

*'धनदत्त के गुरू भदंत वसुभूति बौद्ध धर्म को जिताकर ही छोड़ेंगे और भवभूति के प्रतिभट परमस्मार्त आचार्य मेघातिथि - जो आज की सभा के गुप्त सूत्रधार थे - सनातन धर्म को पुन: प्रतिष्ठित करके ही दम लेंगे। मनुष्य चाहे चूल्हें भाड़ में जाएं, इन्हें अपने धर्म मत का डिंडिम पीटना है। एंक की पीठ पर राजय शक्ति है और दूसरे की हथेली में प्रजा का विद्रोह है। इस जय-पराजय की प्रतिद्वन्द्विता में मनुष्य का चाहे सत्यानाश ही क्यों न हो जाए।'*

उपर्युक्त उद्धरण से स्पष्ट हो जाता है कि राजनीति हो अथवा धर्म, वर्चस्व की लड़ाई हर जगह चल रही है। मनुष्य की अस्मिता की चिंता न धर्म को है और न ही राजनीति को। इतिहास पर नज़र डाले तो हम देखेंगे कि सातवीं सदी में धार्मिक स्थिति अत्यंत जटिल हो चुकी थी। बौद्ध धर्म ही नहीं, वैष्णव और शाक्त सम्प्रदाय भी कई खंडों में विभाजित हो चुके थे। इसके साथ ही इनमें वर्चस्व की लड़ाई भी सतह पर आ गई थी। आत्मकथा में अंकित वैष्णव-बौद्ध संषर्घ सर्वथा इतिहास सम्मत है। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि धर्म की वास्तविक चिंता मनुष्य का कल्याण और उसका सर्वतोमुखी उत्थान न होकर कहीं न कहीं राजनीति और सत्ता प्रतिष्ठान का संरक्षण पाने की थी। आज के संदर्भ में भी यह सवाल उतना ही प्रासंगिक हो

Scanned by TapScanner

गया है। धर्म जब पतनशीलता की ओर अग्रसर होता है तब उसकी यही गति होती है। वह जनता की श्रद्धा और विश्वास खो देता है। जब धर्म व्यक्ति के स्वार्थ पूर्ति का साधन बन जाए तब धर्म अपने आदर्शों से न केवल भटक जाता है बल्कि व्यक्ति के इशारे पर काम करता है।

'बाणभट्ट की आत्मकथा' अपने भाषा-विन्यास और कथन भंगिमा से हमें उस लोक में पहुँचा देती है अथवा उस लोक को हमारे बीच उपस्थित कर देती है मानो सचमुच इस मोहक लोक में बिंधे हुए हम हर्षवर्द्धन के राजकवि की डायरी की पंक्तियाँ पढ़ रहे हों और उसके अंतर्जगत् तथा परिवेश में उतर रहे हों। सवाल उठता है कि इस उपन्यास का भट्ट क्या सचमुच हर्षकालीन बाणभट्ट है अथवा राज्याश्रय और रचनाकार की अपनी अस्मिता को सुरक्षित रखने के समकालीन संघर्ष से जूझता आजादी के पहले या बाद का प्रलोभनों के जाल में भटकता पीड़ित, पराजित और समझौते करता हुआ आज का साहित्यकार या कलाकार है? यह प्रश्न आज की तारीख में और ज्यादा पैना एवं महत्वपूर्ण हो गया है। मध्यकालीन राजसभा का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करने के लिए बुद्धिजीवी की अवतारणा आवश्यक थी। राजसभाओं की उच्छृंखलता, चाटुकारिता और खोखलेपन के बीच बुद्धिजीवी की स्थिति बहुत विचित्र थी। हर्षवर्द्धन द्वारा लम्पट कहा जाने पर बाणभट्ट क्रोधित हो जाता है लेकिन वही बाणभट्ट जब राजसभा का सदस्य चुन लिया जाता है तो वह गौरवान्वित अनुभव करता है। बाणभट्ट का यह चरित्र आज के बुद्धिजीवी, रचनाकारों व कालाकारों के जीवन सत्य को उभारता है। आज न जाने कितने ही रचनाकार और कलाकार सत्ता प्रतिष्ठानों की चापलूसी और उसका आश्रय पाने में ही अपने कर्म की सार्थकता समझते हैं। इस तरह यह उपन्यास हर्षकालीन सामाजिक-राजनीतिक स्थितियों का समकालीन यथार्थ के संदर्भ में अन्वेषण का एक प्रयास है।

## 13.9 सारांश

'बाणभट्ट की आत्मकथा' में मनुष्यता का संधान और प्रेम की सामाजिक अर्थवत्ता को प्रतिपादित किया गया है। निपणिका प्रेम का उत्कर्ष है। उसका अभिनय इसी उत्कर्ष का प्रमाण है। वासवदत्ता की भूमिका में निपुणिका ने तो उन्माद ही बरसा दिया। उसके हर्ष, शोक और प्रेम के अभिनय में वास्तविकता थी। उसने प्रेम की दो दिशाओं को एकत्र कर दिया। भट्टिनी और निपुणिका दोनो के प्रति बाण का प्रेमानुराग ही प्रेम की दो दिशाएँ हैं भट्टिनी की सुरक्षा और मुक्ति के प्रति आश्वस्त हो जाने के पश्चात् निपुणिका प्रेम का वह उत्कृष्ट रूप प्रस्तुत करती है, जो सामान्यतया असंभव दिखाई देता है। वह अपने प्रेम को भट्ट मे विलीन कर देती है और इस तरह दो दिशाओं में बहने वाला प्रेम एकोन्मुखी हो जाता है। दूसरी तरफ भट्ट के प्रति भट्टिनी का प्रेम इस तरह व्यक्त हुआ है

'भट्टिनी ने सुना तो उनका मुख विवर्ण हो गया। झुकी हुई आँखों को और झुकाकर बोली - जल्दी ही लौटना।' लेकिन बाणभट्ट की अंतरात्मा से कोई चिल्ला उठता है - 'फिर क्या मिलना होगा'

यह कहना गलत न होगा कि हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस उपन्यास में प्रेम का जो उच्चादर्श सामने रखा है उसका अंतिम क्षणों तक निर्वाह करने के लिए ही निपुणिका की मृत्यु और तदनंतर भट्टिनी से भट्ट के विछोह की योजना बनायी है। प्रेम कहीं दैहिक न हो जाए, इसके प्रति वे लगातार सतर्कता बरतते हैं।

Scanned by TapScanner

अंत में हम इस औपन्यासिक कृति में गूँजने वाले उस मूल मंत्र की ओर लौटें, अनुभव सत्य अथवा अनभयता का संदेश दिया गया है।

'किसी से न डरना, गुरु से भी नहीं, मंत्र से भी नहीं, लोक से भी नहीं, वेद

हजारी प्रसाद द्विवेदी की इस रचनात्मक कृति की सार्थकता का सबसे बड़ा प्रमा संदेश, जो लोक, वेद, गुरु मंत्र की वर्जनाओं से मनुष्य को मुक्त रखने का है। कोई अंतिम सत्य नहीं है। लोक और वेद भी एक सीमा के बाद अनुपयोगी बन जाते है। इसीलिए जब बाण महावराह की मूर्ति को डूबने से बचाने की तब बाबा उसे धिक्कारते हुए कहते हैं तू पाषण्डी है। यदि महावराह समुद्र में को उबारने की सामर्थ्य रखते हैं तो उनकी मूर्ति के जलमग्न होने पर मोह कै मनुष्यता को डूबने से बचाने की इसीलिए बाण सचेत होकर कहता है कि, 'मैं भट्टिनी को बचाऊँगा।' भट्टिनी की मानवता की रक्षा का महत् उद्देश्य है मानवीय मूल्यों का प्रतीक है, प्रेम और करुणा की भी। यही वे मूल्य है जो दिशा में अग्रसर कर सकते हैं।

मनुष्य के जीवन मूल्य और आदर्शों की रक्षा और प्रतिष्ठा को बचाने में ही 'बा आत्मकथा' की सार्थकता और समसामयिक प्रासंगिकता है।

## 13.10 प्रश्न/अभ्यास

1) नारी जागरण और नारी मुक्ति की दृष्टि से 'बाणभट्ट की आत्मकथा' करें।
2) 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में चित्रित प्रेम की विशेषताओं के संदर्भ में प्रेम विषयक दृष्टि को स्पष्ट करें।
3) अपने रचनाकालीन सामाजिक-राष्ट्रीय संदर्भ में 'बाणभट्ट की आत्म प्रासंगिकता पर प्रकाश डालें।
4) 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में संकेतित कवि-साहित्य की स्थिति पर प्रक
5) एक बुद्धिजीवी के रूप में बाणभट्ट के चरित्र को समकालीन संदर्भों विश्लेषित करने का प्रयास करें।
6) 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में उपन्यासकार के इतिहास बोध और उस की समझ को रेखांकित करें।
7) 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में चित्रित नारी पात्रों की क्रांतिकारी भूमि करें।

## इस खंड के लिए उपयोगी पुस्तकें

1) प्रतिनिधि हिंदी उपन्यास-भाग 1, यश गुलाटी
2) शांतिनिकेतन से शिवालिक, (सं.) शिवप्रसाद सिंह
3) दूसरी परंपरा की खोज, नामवर सिंह